AYU-VOL. 30, NO. 2 (APRIL-JUNE) 2009, pp. 217-220

संस्कृत वाङ्मय में कालाकालमृत्युविज्ञान

आर. के. जखमोला *

आयुर्वेदीय स्नातकोत्तर शिक्षण एवं अनुसंधान संस्थान, गुजरात आयुर्वेद युनिवर्सिटी, जामनगर.

सारांश : जन्म और मृत्यु जीवन चक्र के आदिम एवं अन्तिम छोर के सदृश है, दार्शनिकों ने जन्म को विकृति एवं मृत्यु को प्रकृति की संज्ञा से अभिहित किया है, ठीक वैसे ही जैसे मृदा से निर्मित घट विकृति तथा मृदा प्रकृति रूप है। पांचभौतिक पदार्थों से निर्मित शरीर के नष्ट होने पर ये सभी पदार्थ अपने-अपने भौतिक तत्त्वों में विलीन हो जाते हैं। इस ध्रुव सत्य का बोध होते हुए कि, जिसका जन्म हुआ है, उसकी मृत्यु भी निश्चित है, जैसे श्रीमद् भागवत में वसुदेव जी कंस को कहते है -

मृत्युर्जन्मवतां वीर देहेन सह जायते ।
अद्यवाब्दशतान्ते वा मृत्युर्वै प्राणिनां ध्रुवः ॥

अर्थात् हे वीर ! प्राणियों के जन्म के साथ ही मृत्यु भी उत्पन्न होती है। वह आज हो या सौ वर्ष के पश्चात् प्राणियों के लिए अटल है।अतः इस लेख में मनुष्य को पुरुषार्थ चतुष्टय की प्राप्ति हेतु दीर्घायुष्य प्राप्त करने के लिए सदैव प्रयत्नशील रहने की प्रेरणा को जागृत रखने हेतु अकाल मृत्यु के विविध स्वरूप तथा उनके परिहारार्थ विविध उपायों पर दृष्टिपात किया गया है। स्वास्थ्य रक्षार्थ दैवव्यपाश्रय चिकित्सा एवं युक्ति व्यपाश्रय चिकित्सा तथा आधुनिक चिकित्सा विज्ञान के सहयोग से अकाल मृत्यु का निवारण एवं दीर्घायुष्य प्राप्ति हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए।

शोधपत्र के मुख्य बिन्दु : सामान्यतः श्रुति स्मृत्यादि शास्त्रों में मनुष्य का आयुर्मान १०० वर्ष का निर्धारित किया गया है। अतः मनुष्य की मृत्यु भी गर्भावस्था को संयुक्त कर १०१ मानी गई है। जरावस्था प्राप्त होने पर पूर्ण आयुर्मान का उपभोग करने के पश्चात् प्राप्त मृत्यु को कालमृत्यु तथा आगन्तुक कारणों से हुई मृत्यु को अकालमृत्यु कहते है। विविध ग्रन्थों में अकालमृत्यु के अनेक कारण बताये गये है। कतिपय दृष्टान्तों का समावेश लेख में किया गया है। जिन्हें आगन्तुक के नाम से अभिहित किया है। त्रिकालवेत्ताओं ने मृत्यु को प्रकृति और जन्म को विकृति मानकर मृदा-घट के जैसे ''घट'' विनष्ट होने पर पुनः वह मृदा के मूल स्वरूप में परिवर्तित होना, सहज- स्वाभाविक प्रक्रिया है। तद्वत् शरीर का पुनः अपनी मूल प्रकृति में समाविष्ट होना भी स्वाभाविक प्रक्रिया के अन्तर्गत ही है। चाहे उसमें कारण स्वरूप जो भी उपस्थित हुआ हो। मानवजीवन के आनन्द की प्राप्ति हेतु दैवव्यपाश्रय और युक्तिव्यपाश्रय पद्धतियों द्वारा दीर्घायुष्य प्राप्त करने हेतु सभी सन्मार्गों का अनुसरण करना चाहिए।

श्रुति- स्मृति - पुराणों में मनुष्यों का आयुर्मान सौ वर्ष का बतलाया गया है। एक वर्ष गर्भावस्था का मानकर मानव जीवन के वर्षों की संख्या एक सौ एक होती है। मनुष्य की मृत्यु गर्भावस्था से लेकर कभी भी हो सकती है, अतः मृत्युओं की संख्या भी एक सौ एक मानी गई हैं। यहाँ ''शत'' शब्द गणित संख्यावाचक न होकर असंख्येयता का वाचक भी होता है यथा- 'विवेक भ्रष्टानां भवति विनिपातः शतमुखः' (नीतिशतक)। डल्हण ने भी दोनों अर्थ किये है- 'तत्र गर्भवर्षेण सहैकोत्तरवर्षशतैरेकोत्तरशतं मृत्यवः पूर्यन्ते, इति केचिन्मन्यन्ते, अपरे ब्रुवन्ते, शतशब्दोऽत्रासंख्यावाचकः, तेनासंख्याः मृत्यवः'॥ इन दोनों अर्थों में प्रथमार्थ काल्पनिक और द्वितीयार्थ व्यावहारिक है।

कुछ मनीषियों का मत है कि, मृत्यु असंख्य होती नहीं, केवल एक ही होती है और जब कभी मनुष्य मरता है तब उसी से मरता है और वही कालाकाल मृत्यु होती है। इससे तात्पर्य स्पष्ट होता है कि, पूर्वजन्मकर्मानुसार जीव के जीवन की रूपरेखा तैयार होने के साथ ही मृत्यु - काल भी नियत होता है- ''आयुः कर्मं च वित्तं च विद्या निधनमेव च, पञ्चैतान्यपि सृज्यन्ते गर्भस्थस्यैव देहिनः'' ॥ (हितोपदेश), इसलिए मृत्युकाल के पूर्व उस पर आयी हुई व्याध्यादि आगन्तुक आपत्तियों से वह शरीर रक्षण के लिए विशेष परिश्रम न करते हुए भी जीवित रहता है तथा मृत्युकाल उपस्थित होने पर विशेष परिश्रम करने पर भी वह मृत्यु को प्राप्त होता है, जैसे हितोपदेश में भी वर्णित है-

निमग्नस्य पयोराशौ पर्वतात्पतितस्य च।
तक्षकेणापि दंष्टस्य आयुर्मर्माणि रक्षति ॥
नाकाले म्रियते जन्तुर्विद्धः शरशतैरपि।
कुशाग्रेणैव संस्पृष्टः प्राप्तकालो न जीवति ॥

अरक्षितं तिष्ठति दैवरक्षितं, सुरक्षितं दैवहतं विनश्यति ॥ (हितोपदेश)

अन्यच्च-

नाकाले म्रियते कश्चिद्विद्धः शरशतैरपि।
प्राप्तकालस्य कौन्तेय, वज्रायन्ते तृणान्यपि ॥

नाकाले म्रियते कश्चिन्नास्ति मृत्युरकालजः।
यो यस्मिन् म्रियते काले मृत्युकालः स तस्य हि ॥ (डल्हण टीका)

इस मत की पुष्टि भूकंप, झंझावात आदि नैसर्गिक प्रलयंकारी तथा विमान, जलपोत, युद्धादि की संहारी दुर्घटनाओं से जीवित मनुष्यों से होती है, क्योंकि इनके बचने के स्पष्टीकरणार्थ दूसरी कोई सयुक्तिक उपपत्ति दिखाई नहीं देती है। परन्तु इस प्रकार की दुर्घटनाएं सब कुछ नहीं है, सर्व सामान्य दैनिक ऐहिक जीवन कुछ और है, अतः कुछ मनीषियों ने काल और अकाल दो प्रकार की मृत्यु मानी है। कालमृत्यु अवश्यम्भावी या अटल अवश्य है, किन्तु उसका समय निश्चित नहीं है। इसलिए अनागत विधान से उसका काल बढ़ाया जा सकता है, इसके विपरीत अकालमृत्यु असंख्य है, परन्तु वे अवश्यम्भावी नहीं हैं, पूर्णतया परिहार्य है । व्याधि अकाल-मृत्यु का एक प्रधान कारण है। तात्पर्य है कि, वैद्यकशास्त्र अपमृत्यु को

* भाषाशास्त्री

सिद्ध करता है, जिससे इस शास्त्र की उपादेयता स्वयं स्पष्ट हो जाती है- कालः सुरैरपि हि वञ्चायितुं न शक्यो वक्ष्ये विधानमपमृत्युविनाशाय, मृत्युर्भवेद्यदि कथञ्चन नापमृत्युर्व्यर्थास्तदा चरकसुश्रुतवाग्भटाद्याः ॥ (डल्हण टीका)

जैसे कालाकाल मृत्यु के सम्बन्ध में मतभेद है वैसे कालमृत्यु किसे कहा जाय और अकाल मृत्यु किसे कहा जाय? इसके सम्बन्ध में भी मतभेद हो सकते है । ये मतभेद इन अधिष्ठानों पर अधिष्ठित हैं -

१. आयुर्मान- युगानुसार कलियुग में शास्त्रोक्त आयुर्मान सौ या उससे कुछ अधिक बताया है-

बाल्यं वृद्धिश्छविर्मेधा त्वक् दृष्टिः शुक्रविक्रमौ।
बुद्धिः कर्मेन्द्रियं चेतो जीवितं देशतो ह्रसेत् ॥ (शार्ङ्गधर)

इस श्लोक में शरीर के विविध अङ्गकर्मों का जो ह्रासक्रम बतलाया है वह औसत या आधुनिक परिभाषा में सांख्यकीय (Statistical) है, वह किसी व्यक्ति के लिए लागू नहीं हो सकता। साधारणतया वेदों से मनुष्य को स्वाभाविक आयुर्मान सौ साल का बताया गया है और माना भी जाता है। परन्तु यहाँ पर वह एक सौ बीस वर्ष का बताया है। यह चिन्त्य है और एक स्थान में अन्य प्राणियों के आयुर्मान के साथ मनुष्य का आयुर्मान एक सौ बीस वर्ष का बताया है-समाः षष्टिर्द्विघ्ना मनुजकरिणां पञ्च च निशा हयानां द्वात्रिंशत्खरकरभयोः पञ्चककृतिः। विरूपासत्यायुर्वृषमहिषयोर्द्वादश शुनः स्मृतं छागादीनां दशक सहितः षट् च परमम् ॥ (शाङ्गर्धरदीपिका), मनुष्य के सौ वर्ष का आयुर्मान सामान्यतः सर्वत्र उल्लिखित है-

शतं जीवशरदो वर्धमानः शतं हेमन्तान् छतमुम् वसन्तान् (अथर्ववेद)

पश्येम शरदः शतं, जीवेम शरदः शतं। शृणुयाम शरदः शतं, प्रब्रवाम शरदः शतमदीनाः स्याम शरदः शतं, भूयश्च शरदः शतात् (यजुर्वेद)

वर्षशतं खलु आयुषः प्रमाणमस्मिन् काले । सन्ति च पुनरधिको नववर्षशतजीविनोऽपि मनुष्याः ॥ (चरक)

य एव शतं वर्षाणि यो वा भूयांसि जीवति स ह वै तदमृतमाप्नोति। (शतपथ ब्राह्मण)

शतायुक्तः पुरुषः सर्व वेदेषु वै यदा।
नाप्नौत्यथः च तत्सर्वमायुः केनह हेतुना॥ (महाभारत)

उपर्युक्त उद्धरणों से स्पष्ट होता है कि, सौ साल या उसके पश्चात् हुई मृत्यु, कालमृत्यु होती है। फिर वह आगन्तुक कारण से भी क्यों न हुई हो और जो मृत्यु सौ साल से पहले हो वह अकालमृत्यु है फिर वह शरीर जरा-जर्जर तथा क्षीण होने से भी क्यों न हुई हो।

२. वयोवस्था - तैल तथा बत्ती से परिपूर्ण दीपज्योति धीरे-धीरे जलते हुए, तैल की समाप्ति पर बुझ जाती है, वैसे ही गर्भावस्था से वृद्धावस्था तक मनुष्य की जो छः अवस्थाएं प्राप्त होने के पश्चात् शरीर धीरे-धीरे जरा-जर्जर और क्षीण होने से देहज्योति बुझ जाती है तो वह कालमृत्यु तथा आगन्तुक कारण से अकालमृत्यु होती है -

गर्भबालकुमाराख्यमित्येतत् त्रिविधं वयः।
यौवनं मध्यमं वृद्धतच त्रिविधं पुनः॥ (काश्यप)

३. प्रयत्न पराकाष्ठा - कालमृत्यु अपरिहार्य होती है, परन्तु अकाल में आने वाली सब मृत्युएँ परिहार्य होती है। इसलिए वैद्यकोक्त अनागतविधानानुसार दोषज तथा आगन्तुक रोगों तथा दुर्घटनाओं से बचने हेतु सदैव सचेष्ट रहना चाहिए -

उपसर्गेऽन्यचक्रे च दुर्भिक्षे च भयावहे।
असाधुजनसम्पर्के यः पलायेत् स जीवति॥ (वृद्धचाणक्य)

प्रथम प्रकार की कालमृत्यु सौ वर्ष पर अधिष्ठित होने से आदर्श मृत्यु है। ऐसी आदर्श मृत्यु से मरने वाले भाग्यवान पहले भी रहे, आज भी हैं, और भविष्य में भी रहेगें, परन्तु कुल जनसंख्या के अनुपात में इसकी संख्या हमेशा अत्यल्प रहती है -

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः।
क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन् यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ॥ (रघुवंश)

दूसरे प्रकार की कालमृत्यु निसर्ग प्रक्रिया पर अधिष्ठित होने से इसको नैसर्गिक कालमृत्यु कह सकते हैं। इससे मरने वाले पहले प्रकार की अपेक्षा अधिक होते है, तीसरे प्रकार की कालमृत्यु मनुष्य के दैनंदिन व्यवहार पर अधिष्ठित होने के कारण इसको व्यावहारिक कालमृत्यु कह सकते है। अधिसंख्य मृत्यु इस प्रकार की होती है।

अकाल मृत्यु अज्ञानता, सदाचारहीनता, आलस्य एवं मिथ्या आहार-विहार के कारण होने की सम्भावना अत्यधिक होती है। प्रसवोन्मुख स्त्री के मन में मृत्यु का भय होना अकालमृत्यु का एक कारण है। प्रसव स्त्री के शरीर का सहज धर्म है - 'प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः' (मनु) परन्तु स्त्री का अस्वास्थ्य, गर्भ की विकृताकृति, श्रोणी -गुहा की तथा अपत्यपथ की संकीर्णता तथा विकृति, गर्भ का गर्भाशय में विषमासन, सूतिका तथा गर्भिणी का अज्ञान इत्यादि अनेक कारणों से इस सहज धर्म में बाधायें उत्पन्न होकर स्त्रियों में अनेक व्याधियां तथा अनेक बार अकाल मृत्यु उत्पन्न हुआ करती है। इसमें से कुछ स्त्रियों के लिए अकालमृत्यु अटल होती है , परन्तु अधिकांश कारण परिहार्य होते हैं। जिनका परिहार करने से असंख्य स्त्रियों की अकालमृत्यु का परिहार होता है-

वर्जयन्ति यथाऽरण्यं ससिहं मृगपक्षिणः।
वर्जयन्ति ग्रहास्तद्वत् सौषधं सूतिकागृहम्॥ (सुश्रुत)

जल में डूबने, आग से जलने, विष सेवन से, शस्त्र -आघात से, अत्यधिक स्त्री सेवन, क्षुधा, राजदण्ड, रोग आदि अनेक अकालमृत्यु के कारण विभिन्न ग्रन्थों में प्राप्त होते हैं -

जलमग्निर्विषं शस्त्रं स्त्रियो राजकुलानि च।
अकालमृत्यवो ह्येते तेभ्यो विभ्यति पण्डिताः॥ (डल्हण)

जलमग्निर्विषं शस्त्रं क्षुद् व्याधिः पतनं गिरेः।
निमित्तं किञ्चिदासाद्य देही प्राणान् विमुञ्चति॥ (हितोपदेश)

विष्वग्वातादिभिर्यद्वद् दीपो वर्त्वादिसंयुतः।
निर्वात्यते क्षणाद् देही तथैवागन्तुमृत्युभिः॥ (डल्हण)

कुसुमान्यपि गात्र सङ्गमात् प्रभवन्त्यायुरपोहितं यदि।
न भविष्यति हन्त साधनं किमिवान्यत् प्रहरिष्यतो विधेः॥ (रघुवंश)

राजमूला महाबाहो योगक्षेमसुवृष्टयः।
प्रजासु व्याधयश्चैव मरणं च भयानि च॥ (महाभारत)

राजदोषैर्विपद्यन्ते प्रजा ह्यविधिपालिताः।
असद्वृत्ते हि नृपतावकाले म्रियते जनः॥ (रामायण)
न हि राजापचारमन्तरेण प्रजायामकालमृत्युश्चरति॥ (उत्तररामचरित)

अत्यन्तमतिमेधावी त्रयाणामेकमश्नुते।
अल्पायुषो दरिद्रो वा ह्यनपत्यो न संशयः॥
लक्षणादि शुभा विद्या मेदो मेधादयो यशः।
अल्पे वयसि यस्यैतन्न स जीवोच्चिरं नरः॥ (डल्हण टीका)

अतः विद्वज्जनमृत्यु शरीरधारियों की प्रकृति और जीवन उनकी विकृति कहते है। इसलिए यदि मनुष्य साँस लेता हुआ क्षणभर भी जीवित रहा तो वह लाभवान् है-

मरणं प्रकृतिः शरीरिणां विकृतिर्जीवितमुच्यते बुधैः।
क्षणमप्यवतिष्ठते श्वसन यदि जन्तुर्ननु लाभवानसौ॥ (रघुवंश)

पञ्चमहाभूतात्मक जीवसृष्टि का प्रकृति में विलीन होना तथा प्रत्येक भूत का अपनी योनि में प्रविष्ट होने पर इसमें शोक करने की कौन सी बात है-

पञ्चभिर्निर्मिते देहे पञ्चत्वं च पुनर्गते।
स्वां स्वां योनिमनुप्राप्ते तत्र का परिदेवना॥ (रतनावली)

सांख्यदर्शनानुसार प्रकृति अचेतन अव्यक्त मूलतत्व, जो चेतन पुरुष तत्त्व के साथ मिलकर पंचमहाभूतात्मक जीवसृष्टि में इस प्रकार विकसित होता है-'प्रकृतेर्महांस्ततोऽहङ्कारस्तस्माद्गणश्च षोडशकः। तस्मादपि षोडशकात्पञ्चभ्यः पञ्चशतानि' (सांख्यकारिका) विकृति - प्रकृति से जीवसृष्टि उत्पन्न करने के लिए विकसित हुए महदादि तत्त्व तथा उनका संघटित समुदाय। श्वसन- श्वास-प्रश्वास चेतनावस्था का निदर्शक होता है, अतः जीवन बोध होता है।

तत्त्व द्रष्टा मृत्यु को जीवधारियों की प्रकृति और जीवित रहने को विकृति कहते है अतः अल्पायु की प्राप्ति भी भाग्य की बात होती है। अकालमृत्यु, आगन्तुकमृत्यु जो असंख्य है और जन्म के पूर्व भी जीवों के समक्ष सदैव उपस्थित रहते है - एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणः प्रचक्षते, तत्रैकः कालसंज्ञस्तु शेषा आगन्तवः स्मृताः॥ (सुश्रुत) प्रकृति- विकृति जो सहज में अपने आप, अनायास या स्वभाव से होता है वह प्रकृति है और जो सहज में अपने-आप अनायास, स्वभाव में नहीं होता, जिसको प्राप्त करने के लिए विविध स्वरूप के प्रयत्न करने की आवश्यकता होती है वह विकृति है - 'उष्णत्वमग्न्यातपसंप्रयोगाच्छैत्यं हि यत्सा प्रकृतिर्जलस्य'॥ (रघुवंश) क्षणम् -जीवन एक अल्पांश -'क्षणं बालो भूत्वा क्षणमपि च युवा कामरसिकः' (वैराग्यशतक)। इस संसार में मनुष्यों की आयु गर्भाधान के समय से प्रतिक्षण उसके पीछे पड़ी हुई असंख्य आगन्तुक मृत्युओं से किसी भी समय समाप्त हो सकती है यह वस्तुस्थिति है जो बोलचाल की भाषा में तथा साहित्य में मनुष्यों के सामने सदैव रखी जाती है, जैसे कि, उपर्युक्त तथा निम्नोक्त वचनों में किया गया है, इसलिए कि, मनुष्य उसको ध्यान में रखे और सत्प्रवृत्त होकर 'व्यशेम देवहितं यदायुः' नलिनीदलगत सलिलं तरलं तद्वज्जीवितमतिशयचपलम्। (शंकराचार्य) आयुष्यं जललोलविन्दुचपलं फेनोपमं जीवितम्॥ (हितोपदेश)

आयुः कल्लोललीलं कतिपयदिवसस्थायिनी यौवनश्रीः
ब्रह्मण्यासक्तचिन्ता भवत भवमयाम्भोधिपारं तरीतुम्॥ (वैराग्यशतक)

जलान्तश्चन्द्रचपलं जीवितं खलु देहिनाम्।
तथा विधमिति ज्ञात्वा शश्वत्कल्याणमाचरेत्॥

मृगतृष्णासमं वीक्ष्य संसारं क्षणभंगुरम्।
सज्जनैः संगतं कुर्याद्धर्माय च सुखाय च॥ (हितोपदेश)

शास्त्रों में मनुष्य की आयु सौ या उससे भी कुछ अधिक वर्षों की बतायी है इसमें - सन्देह नहीं है किन्तु यह शतजीविता अनायास किसी के गले नहीं उतरती है। उसकी प्राप्ति एवं असंख्य विघ्नों के नाश हेतु देवताओं की आराधना आवश्यक होती है :

तुभ्यमेव जरिमन् वर्धतामयं मे ममन्ये मृत्युवो हिंसिषुः शतं ये।
मातेव पुत्रं प्रमना उपस्थे मित्र एनं मित्रियात् पात्वंहसः॥१॥
मित्रं एनं वरुणो वारिशादा जरामृत्युं का णुतां संविदानौ।
तदाग्निर्होता वयुनानि विद्वान् विश्वा देवानां जर्निमा विवक्ति॥२॥
द्यौष्ट्वा पिता पृथिवी माता जरामृत्युं कृणतां संविदाने।
यथा जीवा अदितेरुपस्थे प्राणापानाभ्यां गुपितः शतं हिमाः॥४॥
(अथर्ववेद २।२८।१,२,४)

इसके अतिरिक्त वैद्यकोपदिष्टयकर आहार-विहार का सेवन और आचार -विचार का पालन करना श्रेयष्कर होता है। आगन्तुक मृत्यु के कारणों से सावधान होकर दूर रहना चाहिए, इस प्रकार दैवव्यपाश्रय और युक्तिव्यपाश्रय विविध प्रयत्न करके शतायु प्राप्त करने हेतु प्रयत्नशील रहना चाहिए। दीर्घजीवन प्राप्त होने में प्रयत्न एक अंग है इसमें सन्देह नहीं, परन्तु यदि बलवान भाग्य या पूर्वकर्म साथ न हो तो केवल प्रयत्न प्रतिज्ञा पर किसी को शतजीविता प्राप्त नहीं हो सकती है। प्रत्येक व्यक्ति का यह कर्त्तव्य होना चाहिए कि, वह अपना बुद्धि सर्वस्व तथा शक्ति सर्वस्व के अनुसार वैद्यक शास्त्र के तथा संसार के प्राचीन तथा अर्वाचीन दीर्घजीवियों के अनुभवों के आधार पर अकालमृत्यु टालने की प्रयत्न पराकाष्ठा करें जैसे विविध शास्त्रों में उल्लिखित है-

मृत्युर्बुद्धिमताऽपोह्यो यावद्बुद्धिबलोदयम्।
यद्यसौ न निवर्तेत नापराद्धोऽस्ति देहिनाम्॥ (भागवत)

अत्यन्तं कुरुतां रसायनविधिं, वाक्यं प्रियं जल्पतु,
वार्धेः पारमियर्तु, गच्छतु नमो, देवाद्रिमारोहतु।
पातालं विशतु, प्रसर्पतु दिशं, देशान्तरं श्राम्यतु,
न प्राणी तदपि प्रहर्तुमनसा सन्त्यज्यते मृत्युना॥ (सुभाषित रत्नसंदोह)

सर्वे क्षयान्ता निचयाः पतनान्ताः समुच्छ्रयाः।
संयोगा विप्रयोगान्ता मरणान्तं च जीवितम्॥ (रामायण)

यथा फलानां पक्वानां नात्यत्र पतनाद्भयम्।
एवं नरस्य जातस्य नान्यत्र मरणाद्भयम्॥ (रामायण)

यथा स्वप्नमयो जीवो जायते म्रियतेऽपि च।
तथा जीवा अमी सर्वे भवन्ति न भवन्ति च॥
यथा निर्मितको जीवो जायते म्रियतेऽपि च।
तथा जीवा अमी सर्वे भवन्ति न भवन्ति च॥
पञ्चभिर्निर्मिते देहे पञ्चत्वं च पुनर्गते।
स्वां स्वां योनिमनुप्राप्ते तत्र का परिदेवना॥ (रत्नावली)

कः कं शक्तो रक्षितुं मृत्युकाले, रज्जुच्छेद के घटं धारयन्ति।
एवं लोकस्तुत्यधर्मो वनानां, काले काले छिद्यते रुह्यते च॥
(स्वप्नवासवदत्ता)

मृत्योर्विभेषि किं मूढ, भीतं मुञ्चति किं यमः।
अजातं नैव गृह्णाति, कुरु यत्नमजन्मनिं॥ (शार्ङ्गधर पद्धति)

वर्तमान में विज्ञानोन्नति से मनुष्यों के हाथों में संमोहिनी सम अनेक आश्चर्यकारक औषध और वृक्क-हृदयादि मर्मांगों के प्रतिरोपण सम अनेक आश्चर्यकारक शस्त्रकर्म उपलब्ध हुए है और भविष्य में ये सब साधन अधिकाधिक कार्यक्षम होने में सन्देह नहीं है। किन्तु ये साधन परिहार्य अकाल मृत्यु के है, कालमृत्यु के लिए न आजतक कोई साधन उपलब्ध हुआ है और न भविष्य में उपलब्ध होने की सम्भावना है। मनुष्य जीवन पर्यन्त जिस स्वरूप के कर्म किया करता है उसी स्वरूप की अन्तकाल में उसमें मति उत्पन्न हुआ करती है और उसी के अनुसार वह दुर्गति या सद्गति (मोक्ष) को प्राप्त करता है यह शास्त्र सिद्धान्त है -

''कर्माण्यपि हि जन्मान्तरोपभोग्यं फलमारभमाणानि तदनुरूपभावनाविज्ञानं प्रयाणकाले आक्षिपन्ति, यच्चित्तस्तेनैष प्राणमायाति, प्राणस्तेजसायुक्तः महात्मना यथा संकल्पितं लोकं नयति। अथ खलु क्रतुमयः पुरुषो यथाक्रतुरस्मिंल्लोके पुरुषो भवति तथेतः प्रेत्य भवति, सक्रतुं कुर्वीत''॥ (छादोग्योपनिषत्) तात्पर्य यह है कि, मनुष्य जीवनभर सद्वृत्त का पालन करें, संन्मार्ग पर चलकर जीवन के अन्त होने पर मोक्ष को प्राप्त करें॥

सन्दर्भ सूची

१. नीतिशतक - 'भर्तृहरिर्कृत', नरासिंह प्रेस, कलकत्ता।
२. आयुर्वेदीय हितोपदेश-रणजीतराय देसाई, चौखम्भा ओरिएण्टल, वाराणसी -०१।
३. सुश्रुत संहिता - महर्षि सुश्रुत द्वारा विरचित, डल्हण टीका, चौखम्भा आयुर्विज्ञान ग्रन्थमाला, चौखम्भा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी।
४. चरक संहिता - चक्रपाणिदत्त विरचित, आयुर्वेद दीपिका व्याख्या संवलिता, सम्पादक - वैद्यजादवजी त्रिकमजी आचार्य, निर्णय सागर प्रेस, १९४१।
५. शार्ङ्गधर -श्रीमत्पण्डित दामोदरसूनु - शार्ङ्गधराचार्य विरचिता।
६. अथर्ववेद संहिता - मन्त्रानुक्रमण्या, सूक्ष्माक्षर, चौखम्भा ओरिएण्टल, वाराणसी।
७. यजुर्वेद संहिता - मन्त्रानुक्रमण्या, चौखम्भा ओरिएण्टल, वाराणसी।
८. शतपथ ब्राह्मण - वेदार्थ प्रकाश व्याख्या, लक्ष्मी वेंकेटेश्वर प्रेस कल्याण, बम्बई, १८४०।
९. महाभारत - सम्पादक और प्रकाशक, श्रीपाद दामोदर सातवलेकर, स्वाध्याय मण्डल, औंध, सतारा, संवत् १९८६।
१०. काश्यप संहिता - (वृद्धजीवकीयं तन्त्रं वा) चौखम्भा ओरिएण्टल।
११. वृद्ध चाणक्य - चौखम्भा ओरिएण्टल, वाराणसी।
१२. रघुवंश - महाकवि कालिदासकृत, चौखम्भा ओरिएण्टल।
१३. उत्तररामचरित - भवभूति विरचित, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
१४. रत्नावली - हर्ष विरचित, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
१५. श्रीमद्भागवत - व्यास प्रणीत, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
१६. वाल्मिकी रामायण - महर्षि वाल्मिकी, मोतीलाल बनारसीदास, वाराणसी।
१७. सुभाषित रत्नसंदोह - निर्णय सागर प्रेस।

Sanskrit Vangmay me Kalakalmrityuvijnana

R. K. Jakhmola

Life & death are two expense of lifecycle, according to Darshanika birth is Vikriti (unnatural) & death as Prakriti (natural), as in case of earthanpot the earth is Prakriti & pot is Vikriti. After death of Panchabhautika sharira these elements set mixed & their respective physical Tatva. Whole comprehensive the ultimate fact, “The person his is born, his death is also certain.” As in Shrimad Bhagwata Vasudev says to Kansa.

Mrityurjanmavatam Veer Dehen Saha Jayate $
Adyavabdashatante Va Mrityurvai Pranienam Dhruvah $$

It means he valorous ! Death is born with the birth of organism (Living being). It may occur today or after hundred years but is inevitable. Through this article for the acquisition of Purushartha chatustaya, to keep up to inspiration to set the longevity, the various aspects of intimacy death & various measures to overcome this has been given quick glance. One should make every effect to live long & healthy life using Devvyapashraya chikitsa, Yuktivyapashraya chikitsa & modern medical science. Important points of research paper are normally use of human being is fixed as hundred years in Shruti & Smrityadi Shastradi. The death of human, including Garbhavastha is accepted to be 101. The death occurring after setting used after enjoying full life is Kalamrityu & death cause by some (Agantuk Karnas) external causes is said to be Akalamritu. (Untimely death) Various cause of Akalamritu are describe in various Granthas. (Literature) Various Dristantas are included in this article. Which are mentioned as extraneous (Agantuk) the Trikalvettas accept death as Prakriti & birth as Vikriti & explain that it is natural that the earth pot after its destruction is transformed in to its Mula Swarupa (Root form) that is earth. Hence like this it is also natural that Sharira (Body) set merged in Mula Prakriti. Irrespective of the cause arisen for this. Right path should always follow to set happiness in this human life & Devvyapashraya chikitsa, Yuktivyapashraya chikitsa methodologies to set longevity.

♦ • ♦